शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 मई 2022
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

# शिवराम के नुक्कड़ नाटकों में स्त्री-विमर्श

डॉ. मीता शर्मा (निर्देशक)
सह आचार्य
डॉ. कंचना सक्सेना (सह निर्देशक)
भूतपूर्व प्राचार्य
शिव कुमार वर्मा (शोधार्थी)
राजकीय कला महाविद्यालय
कोटा, राजस्थान, भारत

## शोध संक्षेप

*स्त्री की अस्मिता को केन्द्र में रखकर जब साहित्य का सृजन किया गया तो वह स्त्री-विमर्श कहलाया। हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श अन्य अस्मितामूलक विमर्शों की भांति ही मुख्य विमर्श रहा है। शुरूआत में इसको नारीवाद या मातृसत्तात्मक अथवा अंग्रेजी में फेमिनिज्म कहा गया। स्त्रीवादी विमर्श संबंधी आदर्श का मूल कथ्य यही रहता है कि लिंग के आधार पर स्त्री-पुरूष के मध्य किसी तरह का पक्षपात न हो। स्त्री विमर्श का प्रादुर्भाव बीसवीं शताब्दी में फ्रांसिसी लेखक सिमोन द बुआ कि पुस्तक 'द सेकण्ड सेक्स' (1949) के प्रकाशन से माना जाता है। भारत में भी स्त्री मुक्ति के अनेक सुधारवादी आन्दोलन हुए इनकी प्रतिध्वनि साहित्य में सुनाई देती है। प्रस्तुत शोध पत्र में शिवराम के नुक्कड़ नाटकों में स्त्री-विमर्श का विश्लेषण किया गया है।*

## भूमिका

प्राचीनकाल से ही भारतीय पितृ सत्तात्मक समाज महिलाओं के साथ पक्षपात करता आ रहा है। नवजागरण काल में इसमें सुधार के प्रयास विभिन्न नारीवादी आन्दोलनों के माध्यम से किये गए। राजा राममोहन राय ने सतीप्रथा, बाल-विवाह, विधवा-विवाह और बहुपत्नी प्रथा के विरूद्ध लड़ते हुए महिला सशक्तिकरण की दिशा में प्रयास किया तो स्वामी विवेकानन्द, दयानन्द सरस्वती ने स्त्री शिक्षा पर जोर दिया। हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श की शुरूआत छायावाद युग से मानी जाती है। महादेवी वर्मा की कविता महिला सशक्तिकरण इसका सुन्दर उदाहरण है, जिसमें नारी के जागरण एवं मुक्ति के प्रश्न का उठाया गया है। स्त्री विमर्श में यद्यपि महिला लेखिकाओं की लेखनी की धार तेज रही तथापि प्रेमचंद से लेकर राजेन्द्र यादव तक अनेक पुरूष लेखकों ने भी नारी समस्या को अपने साहित्य में उकेरा है।

## शिवराम के नुक्कड़ नाटकों में स्त्री-विमर्श

शिवराम का साहित्य भी नारी विमर्श की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उनके नाटक- 'हम लड़कियाँ', 'दुलारी की माँ' आदि महिला सशक्तिकरण का जीवंत उदाहरण है। "शिवराम के नाटकों में मात्र 'महिला-विमर्श' नहीं है, बल्कि महिलाएँ जिन आपदाओं और संघर्षों से गुजर रही हैं, उनके जीवन्त आख्यान है।"[1] 'दुलारी की माँ' नाटक में मुख्य पात्र दुलारी की माँ को जीवन के

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 मई 2022
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

कई मोर्चों पर एक साथ संघर्ष करते हुए बताया गया है। वह कारखाना बंदी से बेरोजगार हुए पति द्वारा शराब के अड्डे पर एक बिगडैल अमीर दौलतराम से अपनी बेटी दुलारी का सम्बन्ध पक्का करने पर जमकर विरोध करती है। जब दुलारी का पिता दौलतराम के पास मौजूद धन-संपति को रिश्ते का आधार मानकर व्याख्या करता है तो प्रत्युत्तर में दुलारी की माँ धन-दौलत से ऊपर वैचारिक समानता और सुकून को सर्वोपरी बताती है-

"कोई बात न चीत और रिश्ता पक्का कर दिया ? कम से कम मुझे तो बताते। कहाँ कर दिया रिश्ता पक्का ? घर-वर कैसा है ? लड़का क्या करता है ? देखने में कैसा लगता है ?"[2]

"गरीबी-अमीरी बाद की बात है। पहली बात ये है कि जिंदगी में चैन और सुकून होना चाहिए। आपस मे प्रेम हो, दोनों सही रास्ते पर चलते हों तो गरीबी में भी जिंदगी सुख से कट जाती है। आदमी अच्छा बरताव न करे, उसका चाल-चलन अच्छा न हो, तो हर सुख होने पर भी औरत की जिंदगी बर्बाद। हमें गरीबी से प्रेम नहीं है। गरीबी कोई अच्छी चीज नहीं है। भला तो इसमें है कि दुनिया में कोई गरीब न हो। लेकिन इस कीमत पर अमीरी नहीं चाहिए हमें। ये रिश्ता ठीक नहीं हैं।"[3] दुलारी की मां सम्पूर्ण नाटक में सामाजिक बदलाव तथा अपने हक और महिलाओं के प्रति पुरूष समाज की हेय दृष्टि का पुरजार विरोध प्रदर्शित करती है। वह शराब के ठेकेदार के विरूद्ध संघर्ष करते हुए गरीब्म जदूरों पर लिखित कर्जे की बही को फाड़ देती है। खान मालिकों द्वारा उसकी खूबसूरती को लेकर बदनीयती से देखने का उपहास ही नहीं उड़ाती, बल्कि उनके गुंडों से भी लड़ जाती है। जब ठेकेदार दुलारी की माँ की खूबसूरती के प्रति वासनामय विचार रखते हुए उसे रात को अपनी कोठी पर आने की कहता है तो दुलारी की माँ न केवल उसका उपहास उड़ाती है, बल्कि उसके वास्तविक चेहरे को समाज के सामने लाती है- "मैं तो यहाँ भी नहा धोकर ही आयी हूँ। यहीं हो जाये दूसरा काम (कामगार साथियों से ऊँची आवाज में) सुनो, भाइयों और बहनो सुनो! ये साहब कह रहे हैं कि काम छोड़कर घर जा। नहा धोकर शाम को डेरे पर आ जाना... बहनों, साहब कह रहे हैं कि खूबसूरत औरतों को खूबसूरत काम दिया जायेगा। अपना-अपना दिन तय कर लो साहब ने मुझे तो आज ही बुलाया है।"[4]

मानव इतिहास की यह विडम्बना है कि जगत जननी नारी की की स्थिति शोचनीय रही है। प्रायः नारी की स्वयं के प्रति यह धारण बनी हुई है कि वह प्राकृतिक रूप से ही पुरूष से भिन्न है "क्या करें, प्रकृति ने ही हमसे अन्याय किया है।"[5] समाज को सभ्य बनाने और उन्नति के नवीन कीर्तिमान गढ़ने में नारी की महत्ती भूमिका होती है। वह जीवन में कभी स्व-इच्छा तो कभी पर इच्छा से अनेक समझौते करती है। फिर भी कदम-कदम पर उसका शोषण होता रहा है। कभी बेटी बनकर, कभी पत्नी बनकर कभी माँ बनकर तो कभी बहन बन कर। समाज में नारी शोषण के इस कथ्य को शिवराम के नाटकों में कई जगह समेटा गया है। वह प्राचीन समय से नारी के शोषण की व्यथा का अंकन करते हुए वर्तमान में नारी सशक्तिकरण हेतु गुलामी की जंजीर तोड़ने का आह्वान करते हैं -

"जो तिल-तिल गले, बाती सी जले
जो देती जनम, जिससे बनता है घर
वही सतायी गई, वो ही पीड़ित हुई
अपमानित हुई वो, हुई दस्ब-दर
दासी समझा कभी, भोग्या समझा कभी

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 मई 2022
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

कभी वेश्या बना, दीना कोठे पे धर
वस्तु समझा उसे, बेचा बाजार में
आदमी हो नहीं जैसे हो जानवर।
लेकिन अब इस नये वक्त में औरतें
जागकर, इस गुलामी से इंकार कर
कह रही हैं कि हम भी तो इंसान हैं
अब कभी मत समझना हमें जानवर।"[6]

भारतीय पुरूष प्रधान समाज में नारी पर अन्याय-अत्याचार होना आम बात हो गई है। यदि वह अन्याय को चुपचाप सहन करती है तो पतिव्रता है, नहीं तो समाज उसे कुलच्छनी, कुलटा और न जाने कितने-कितने विशेषणों से सम्बोधित करता है। हमारे समाज में लड़का-लड़की में भेदभाव किया जाता है। लड़की का जन्म होना ही अभिशाप है, जबकि लड़के के जन्म पर खुशियाँ मनाई जाती हैं। लड़के की अपेक्षा लड़की के साथ हर कदम पर भेदभाव होता है। लड़की का स्कूल जाना भी पिता रूप में पुरूष को स्वीकार नहीं है। यह असमानता समाज में सैकड़ों वर्ष पहले से ही मौजूद है और पूँजीवादी युग में भी बदस्तूर जारी है। प्राचीन काल से ही नारी को केवल पुरूष के मनोरंजन तथा संतानोत्पत्ति का साधन मात्र माना गया है। नारी के प्रति समाज का दृष्टिकोण आदि समय से ही उपेक्षा से परिपूर्ण रहा है। कन्या भ्रूण हत्या, बालिका वध, सती प्रथा आदि इसके उदाहरण हैं। 'हम लड़कियाँ नाटक में शिवराम ने समाज में व्याप्त कन्या भ्रूण हत्या का जगन्नाथ के माध्यम से चित्रण किया है-

"लड़कियाँ जीवित रहेंगी तो उन्हें पालना-पोसना पड़े. । गाड़ी होंगी तो शादी ब्याह करने पड़े. गे। भात जामने देने पड़ेंगे। सब कामों में पैसे खर्च होते हैं। हमारे पुरखे कितने समझदार थे। कितने पैसे बचा लिए उन्होंने लड़कियों से मुक्ति पा कर।"[7] वर्तमान में लिंगानुपात की विषमता के लिए भी कन्याभ्रूण हत्या जैसी कुप्रथा को उनके नाटकों में जिम्मेदार ठहराया गया है। आज समाज और बिरादरी में लड़कियों की कमी के कारण लड़कों के सम्बन्धों की चिंता को व्यक्त किया है-

"वे समझते थे भाई कि वे ही होशियार हैं। चारों तरफ ये होशियारी फैल गई। अब हालात यह है कि बिरादरी में लड़कियों का अकाल पड़ गया है।"[8]

## निष्कर्ष

अंत में शिवराम के नाटकों में महिलाएं शोषण एवं जुल्म के खिलाफ लड़ती हुई बीमारियों को समूल नष्ट करने का प्रयत्न करती हैं। उनके नुक्कड़ नाटकों ने नारी को ऊपर उठने की शक्ति दी। उसे समाज के उन ठेकेदारों, शोषकों, अधिकारियों के समक्ष लाल झण्डे लेकर खड़े होने पर विवश कर दिया जो जुल्मों द्वारा उन्हें प्रताड़ित करते हैं अर्थात् उन्होंने नारी की सामाजिक स्थिति एवं त्रासदी को रेखांकित किया है तो अधिकारों के प्रति सजग।

## सन्दर्भ ग्रन्थ

*1 हमारे पुरोधा-शिवराम, स. महेन्द्र नेह, राजस्थान साहित्य अकादमी उदयपुर, 2012, पृष्ठ 30*
*2 दुलारी की माँ, शिवराम, पृष्ठ 7*
*3 वही, पृष्ठ 11*
*4 वही, पृष्ठ 22*
*5 इतिहास बोध, संपादक-लाल बहादुर वर्मा अप्रैल-जून-2003 अंक 34, पृष्ठ 34*
*6 दुलारी की माँ, शिवराम, पृष्ठ 6*
*7 गटक चूरमा, शिवराम, हम लड़कियाँ, बोधिप्रकाशन, जयपुर, पृष्ठ 63*
*8 गटक चूरमा, शिवराम, हम लड़कियाँ, बोधिप्रकाशन, जयपुर, पृष्ठ 63*